अजन्ता के मिथकीय भित्ति–चित्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ० मनोज कुमार
ईमेलः manojgbss0@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ० मनोज कुमार

अजन्ता के मिथकीय भित्ति–चित्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Artistic Narration 2023, Vol. XIV, No. 1, Article No. 4 pp. 24-31

Online available at:
https://anubooks.com/journal/artistic-narration

सारांश

अजन्ता के गुफा–मन्दिरों की भित्तियों पर काल्पनिक चरित्र–चित्रों का भावपूर्ण चित्रांकन हुआ है उसको तत्कालीन समय में कलाकारों द्वारा जिस प्रकार संयोजित किया गया, उनमें उनकी अद्‌भुत सोच एवं महान विचारों का बोध होता है। उनका चित्र–संयोजन में ज्ञान गहरा ही रहा होगा। कई सौ वर्षों की एक लम्बी अवधि में वहाँ अजन्ता की भित्तियों में सुन्दर चित्र श्रृंखला का जिस तरह उपयुक्त एवं सुव्यवस्थित रूप से सृजन हुआ, वह कला की दृष्टि से चिरकाल तक उनके महत्व को दर्शाता आया है। यहाँ इन चित्रों में निहित संयोजन के सिद्धांतों की तत्व–मीमांसा उल्लेखनीय है। इन गुफाओं में सौन्दर्य एवं भाव से युक्त चित्रों का संयोजन वह पूँजीभूत तत्व है, जो चित्राकृतियों में शैलीगत भिन्नता को दर्शाता है।

मुख्य बिन्दु

अजन्ता, चित्रांकन, भावपूर्ण, अद्‌भुत, सुन्दरता।

प्रत्येक युग की चित्रकला में उनकी संयोजना कला–कर्म में ही सन्निहित रहती है, जिसके परिणाम स्वरूप विविध कला शैलियों का जन्म होता है। अजन्ता में चैत्यों के द्वार भित्ति आदि पर यक्ष–यक्षिणी, मिथुनाकृतियाँ, गन्धर्व, इत्यादि को चित्रों के साथ संयोजित कर अंकित किया गया है। यहाँ आकार एवं सुन्दरता की दृष्टि से प्राकृतिक संयोजन में आकृतियाँ बनी हुई है। इस तरह की आकृतियों के शिल्पांकन अजंता के साथ–साथ अन्य ऐतिहासिक स्थलों जैसे– बोधगया, भरहुत, सांची, एलोरा में भी देख सकते हैं।[1]

(क) अजन्ता की गुफाओं के मिथकीय भित्ति–चित्रों का उल्लेख

अजन्ता की गुफाएँ जिनमें चित्रों के विषय बौद्ध–धर्म से अनुप्रेरित हो चित्रांकित किए गए। उनमें उनके पूर्वजन्म से सम्बन्धित कथानकों का काल्पनिक चरित्र चित्रण दृश्यांकित है। साथ ही यहाँ चित्रों में विषय–वस्तु सामाजिक, धार्मिक एवं प्राकृतिक तीन रूपों में प्रतिरूपित हैं। अजन्ता की गुफाओं में प्रायः तीन प्रकार के चित्र अलंकारिक, रूपवैदिक एवं वर्णनात्मक रूप में चित्रित हैं। इनमें से आलंकारित चित्रों में गन्धर्व, किन्नर, अप्सराएँ, नाग, यक्ष, विधाधर एवं इनके अतिरिक्त गुफाओं की छतों पर अन्य मिथकीय जानवर, फूल, लताएँ पशु–पक्षी चित्रित हुए हैं। दूसरे क्रम में रूपवैदिक के अन्तर्गत बोधिसत्व पद्मपाणि, मरणासन्न राजकुमार, लोकपाल आदि कथाओं का अलंकरण रहा है एवं तीसरे क्रम में जिसे वर्णनात्मक शैली से व्याख्यायित किया गया है, उनमें भगवान बुद्ध के पूर्वजन्म की कथाओं (जातक) की अभिव्यक्ति है।[2]

अजन्ता के अनेक दृश्यों में विभिन्न पशु–पक्षियों के अंकन प्राप्त होते है, जिसमें कुछ तो अपने स्वाभाविक रूप में तो कुछ मिथकीय हैं। इनके अतिरिक्त विभिन्न जातक कथाओं से सम्बन्धित जीवों का अंकन किया गया है। इन पशुओं में जैसे–सिंह, गज, अश्व, वृषभ, वराह, मृग, श्रंगाल, मेश, विडाल, श्वान, हंस, कुक्कुट, काक, लट्वा एवं मयूर विशेषतः उल्लेखनीय हैं। कुछ दृश्यों में केवल पशु जगत का ही अंकन है, किन्तु कुछ में उन्हें मनुष्यों के साथ कथा के संदर्भ को स्पष्ट करते अंकित किया गया है। यहाँ इन गुफाओं में जितना महत्व मानवीय आकृतियों का दिखता है, उतना ही अन्य दूसरे पशु–पक्षियों का भी रहा है।[3]

इन काल्पनिक पशुओं का उल्लेख प्राचीन साहित्यों में मिलता है, जैसे 'रामायण' में ईहामृगों का उल्लेख आता है, जो निश्चय ही काल्पनिक जीव माने गए हैं। इसमें इहा का अर्थ 'अभिलाषा' एवं मृग का अर्थ 'तृण' को ढूँढ़ने वाले से है। अर्थात् अलभ्य वस्तु की प्राप्ति हेतु उसे खोजने की वृत्ति के प्रयास से है। इसके अतिरिक्त वैदिक ग्रन्थों में काल्पनिक जीवों से सम्बन्धित होने के संदर्भ प्राप्त होते हैं। शतपथ ब्राह्मण में उभय शीर्ष्णी सुपर्णी का उल्लेख आता है। भारतीय कला में संयुक्त आकृति अथवा काल्पनिक आकृति के पशु–पक्षी एक सक्षम कल्पनाशक्ति के परिचायक हैं।

इनके सम्बन्ध में श्री आर0एस0 महाजन एवं बी0डी0 महाजन के अनुसार– ''अजनता की गुफाओं की छतों में कलाकारों द्वारा स्वतंत्र रूप से चित्रण जिसमें स्त्री–पुरूष की समृद्धशाली

विभिन्नता पशु–पक्षियों, ज्यामितीय आलेखन, फूलपत्तियों के नमूने, फल, भूत, प्रेम, पिशाच आदि विभिन्न प्रकार के काल्पनिक जीवों की रचना की है।'' यहाँ कलाकार ने कल्पना में विद्रोह उत्पन्न कर विभिन्न काल्पनिक चित्रों को दृश्यांकित किया है।[4]

ऐसे कला निरूपण केवल भारत में ही नहीं, बल्कि पश्चिम एशियाई विभिन्न स्थलों में भी मिलते हैं। इस पर विचार करते हुए कुमार स्वामी जी ने लिखा है कि ईसा से लगभग दो शती पूर्व गंगा की घाटी से लेकर भूमध्य सागर तक के क्षेत्र में एक विशेष कला परम्परा प्रचलित थी एवं ये साक्ष्य उस संस्कृति की देन माने जाते हैं, जो किसी एक स्थान तक ही सीमित न होकर बल्कि सारे मध्य एशियाई क्षेत्र में व्याप्त रही होगी।

जातक कथाएँ भगवान बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाएँ हैं, यहाँ जातक शब्द का अर्थ है, जात अर्थात् जन्म सम्बन्धी। बौद्ध साहित्य में जातकमाला नाम का एक ग्रन्थ, जिसके रचयिता आचार्य आर्यशूर थे। तारानाथ द्वारा आर्यशूर की जातक माला में 34 जातक हैं एवं श्री ईशानचन्द्र के अनुसार महावस्तु नाम के ग्रन्थ में लगभग 80 कथाएँ हैं, जबकि थेरवादियों एवं सिंहल, श्याम, वर्मा, हिन्दचीन आदि देशों में बौद्ध–धर्म की परम्परानुसार इनकी संख्या–550 मानी गई है। वैसे 'जातककट्ठकथा' में इनकी संख्या–547 है। 'खुदक निकाय में जातक कथाओं का संकलन जिसके एक खण्ड चरीय पिटक में पदम् जातकों का संग्रह है। यह जातक कथाएँ मिथकीय हैं, जिसकी संख्या पालि भाषा में 547 है। जिनके संग्रह को जातकमाला या बोधिसत्वदान माला भी कहा गया है। इसे (बोधि + सत्व + अवदान + माला), अर्थात् किसी प्राणी मात्र (सत्व) द्वारा, सत्कर्म (अवदान) के एक–एक मोती (प्रत्येक जन्म) पिरोकर माला तैयार करना ही बुद्धत्व प्राप्ति है, अर्थात् बुद्धत्व प्राप्त करने हेतु किए गए प्रयत्नों के संकलनों को ही बोधिसत्वावदान माला कहा गया है। मात्र एक बोधिसत्वावदान का अर्थ इतना गहरा हो सकता है तो सम्पूर्ण कथारूपों का अर्थ कितना अधिक गूढ़ एवं रहस्यात्मक होगा, क्योंकि बोधिसत्व के प्रत्येक जन्म का उद्देश्य एक ही था। ऐसा माना जाता है, कि ब्राह्मण सुमेध की एक प्रतिज्ञा द्वारा ही जातकों की रचना मानी गई है। बौद्ध–धर्मानुसार सुमेध ने अर्हत बनने एवं वैयक्तिक मोक्ष–प्राप्ति के कई हजारों वर्ष पूर्व ही अस्वीकृत कर सर्वजनहिताय के लिए सभी को सत्य की नौका पर सवार होकर अस्तित्व के सागर को पार करने की इच्छा की एवं यह माना, कि तभी वे चित्वान (निर्वाण) प्राप्त करेंगे। इन जातक कथाओं को गुप्ताकल से पूर्व लगभग सभी बौद्ध कला केन्द्रों में स्थान मिला। इस सन्दर्भ में भारत में मध्यप्रदेश में स्थित भरहुत स्तूप का शिल्पांकन विशेष उल्लेखनीय है, लेकिन चित्त स्वरूप में विस्तृत एवं प्राचीनता की दृष्टि से ये अमूल्य धरोहर अजन्ता की गुफाओं में व्याख्यायित है।[5]

(ख)अजन्ता की गुफाओं में अर्द्ध–मानवीय मिथकीय स्वरूपों का विवेचन

अजन्ता की गुफाओं के चित्र जो तीन स्वरूपों में अलंकृत है। जैसा साहित्यों में वर्णित है, कि इन तीनों में से पहला आलंकारिक वर्ग जिनमें उपदेवताओं के चित्र जैसे– नाग, यक्ष,

गन्धर्व, विधाधर, किन्नर इत्यादि का वर्णन है। ऐसे चित्रण अजन्ता की गुफाओं में अधिकांशतः देखने को मिलते हैं, जिसको बुद्ध की कथावस्तुओं के साथ सन्निहित कर बहुत सुन्दरता से चित्रण किया गया है।[6]

भारतीय कला एवं संस्कृति जो अति प्राचीन है। यहाँ प्रचलित विभिन्न संस्कारों के अन्तर्गत जो दैवीय अथवा अर्द्ध–दैवीय शक्तियों को समय–समय पर पूजा जाता रहा, उन्हें समाज में अलग ही स्वरूप से पुकारा गया। ऐसी अनेक शक्तियाँ प्रत्येक युग मानव–जाति के बीच सदैव रहती आयी है। इन अर्द्ध–मानवीय शक्तियों में नाग, यक्ष, इत्यादि सभी एक दृष्टिकोण से माने गए हैं। इनके सम्बन्ध में अनेक पुराकहावतों एवं कथाओं का उल्लेख विविध ग्रन्थों में अध्ययन के अन्तर्गत ज्ञात होता है। इसका अस्तित्व समाज में अति प्राचीन काल से रहता आया है। दैवीय–शक्तियों के उद्‌भव के साथ ही यह भी सहायक रूप में उस समय प्रकाश में आए होगें। मानव के उत्थान के साथ यह भी सदैव परिवर्तित रूप में प्रकट्‌मान होते रहते हैं, क्योंकि वह शक्तियाँ जो प्रकृति के नियमों के संचार में सहभागी होती हैं। इन सभी का सम्बन्ध मानव–जीवन से रहता आया है। भारत में इन सभी के प्रति संकल्पित अवधारणाएँ मिथक–शास्त्र का एक अभिन्न हिस्सा है।[7]

भारतीय धर्म एवं संस्कृति में देव–देवियों के साथ सदैव यह शक्तियाँ विद्यमान थी, जिन्हें देवत्व की सीमा तक नहीं माना गया, लेकिन उनका फिर भी अपना एक पृथक महत्वपूर्ण अस्तित्व मानव–समाज में रहा, इनके शारीरिक बनावट में मिश्रण अवश्य रहा, इनका पशु तथा मनुष्य के अंग मिलाकर एक पूर्ण अर्द्ध–मानवीय आकृति के रूप में देखा गया, जो भारतीय मानव–समाज में मिथकीय रचना मानी गई है। यह केवल अजन्ता में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत के प्राचीन मंदिरों एवं देवालयों में इनके स्वरूपांकन को देखा जा सकता है। इन्हें चित्र एवं शिल्प दोनों में अंकित किया जाता रहा है। विष्णुपुराण में इन्हें आठ प्रकार की देवयोनियों में जैसे– यक्ष, गन्धर्व, नाग, विधाधर, सिद्ध, गुह्यक, वसु, ऋषि–मुनि, असुर, अप्सराएँ एवं किन्नर आदि में इनकी गणना की गई, जिन्हें धर्मग्रन्थों में व्यवन्तर से उच्चरित किया गया। इन गुफा–मन्दिरों में ऐसी अनेक जगहों में एक इन व्यवन्तर स्वरूप में उद्‌बोधित किए जाने वाले अर्द्ध–योनि देवताओं को बुद्ध के चित्रों के साथ चित्रांकित किया गया। हिन्दू एवं अन्य धर्मों के अन्तर्गत इन सभी देवों का बड़ा ही महत्व है। इन सभी का चित्रण प्रवेश द्वारों को अलंकृत करने के लिए एवं सौन्दर्य प्राप्ति हेतु किया जाता रहा होगा।[8]

नाग

भारतीय कला में नागों के अंकन का प्रचलन प्राचीन कला से ही रहा है। प्रागैतिहासिक युग में यह सर्प अनार्य व्यक्तियों द्वारा पूजा जाता रहा है। आर्य सभ्यता के अन्तर्गत ब्राह्मण, बौद्ध एवं जैन धर्मावलम्बियों द्वारा इस जीव को अपनाया गया। भारत के साथ–साथ अन्य देशों में भी नाग–पूजा का प्रचलन किसी न किसी रूप से होता रहा, इसके सम्बन्ध में फग्यूर्सन महोदय

द्वारा इजिप्ट, जूडा, मेसोपोटामिया, ग्रीस, इटली, जर्मनी, फ्रांस, ग्रेटब्रिटेन, अफ्रीका, अमेरिका तथा पूर्वी एशिया आदि देशों में नाग–पूजा का विस्तृत उल्लेख किया गया है। इन सभी प्राचीन धर्मों के साथ कला में भी नागों को यथा–स्थान दिया गया। इसके उल्लेख प्राचीन भारतीय धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित रहे हैं एवं इसलिए कला में भी इनका शिल्पांकन स्वतंत्र रूप से एवं विभिन्न देवी–देवताओं के साथ समय–समय पर किया गया। इनके स्वरूप में परिवर्तन समय–समय पर होता आया है।[9]

इसमें पहले रूप में नागों को देवताओं के समान सम्मान एवं पूजा योग्य माना गया, बलराम इसके मुख्य उदाहरण के रूप में रह रहे हैं। दूसरे रूप में इनका भलि–भांति दमन किया गया, इसका उदाहरण विश्षु के शेषशायी तथा कृष्ण के कालियामर्दन स्वरूप में वर्णन आता है। शैव सम्प्रदाय में नागों को शिव के आभूषण एवं आयुध स्वरूप में क्योंकि भगवान शिव द्वारा काल अर्थात् नाग को वश में किए हुए अर्द्धस्वरूप में माना गया। पुराणों में नाग को सूर्य की तरह काल का द्योतक जिसमें काल की भयंकरता व्याप्त है। सर्प, यमराज एवं सूर्य का कालवाची है। सूर्य दैनिक काल का संकेत तो सर्प मृत्यु के समय का उद्बोधन करता है। अग्निपुराण में ग्रहयज्ञ के वर्णन में इसे देवताओं की सूची में कर इसी में ही नागपंचमी व्रत को आरोग्य, स्वर्ग एवं मोक्ष देने वाला कहा गया है।

इनके ऐतिहासिक स्वरूप का विश्लेषण करें, तो यह अति प्राचीन जीव इस धरा पर रहते आए हैं। पौराणिक युग से इन्हें विशेष स्थान समाज में दिया जाने लगा। महाभारत काल में सर्पो के वंश का वर्णन (नागवंश) जो खाण्डववन में प्रतिस्थापित माना जाता है। इस वंश के प्रधान शेषनाग एवं उनके साथ अन्य जैसे– काकोर्ट, धृतराष्ट्र, तक्षक, वासुकी तथा उलूपी का वर्णन प्राचीन–ग्रन्थों में आता रहा है, जिसका एक लम्बा इतिहास रहा है। इस समय इनकी एक प्रजाति (अद्ध–मानवीय–स्वरूपित जीव), जिसके उद्भव का कारण इस धरा पर मानव के कल्याण के लिए माना गया। इस तरह के जीव में नागार्जुन का नाम प्रमुखतः आता है। इनका दक्षिण भारत की ओर साम्राज्य का अधिक विस्तार रहा होगा। भारतीय पौराणिक कथाओं में इनके होने की ऐसी अनेक गाथाओं के द्वारा वर्णन प्राप्त होता है। बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व महात्मा बुद्ध के पूर्वजन्म की अनेक काल्पनिक मिथकीय कथाओं में नागरूपीय चरित्रों का उल्लेख वर्णित है। महात्मा बुद्ध के द्वारा भी पूर्वजन्म में कई बार नाग के रूप में बोधिसत्व अवतरित हुए, जिसका उल्लेख जातक कथाओं के अन्तर्गत कई बार आया है।[10]

बौद्धधर्म में जिन देवी–देवताओं के साथ नाग का उल्लेख संस्कृत, साहित्य एवं कला में मिलता है, उनमें से प्रमुख रूप से बुद्ध, बोधिसत्व, अवलोकितेश्वर (पद्मपाणि) एवं बौद्ध देवी तारा है। बौद्धधर्म के साहित्यों में कलाविदों द्वारा सर्प का तीन रूप में उल्लेख किया गया है– 1. जन्तु रूप में, 2. मिश्रित रूप (आधा सर्प आधा मनुश्य) एवं 3. नागराज रूप में।

कला में अधिकांशतः मिश्रित रूप के आकार को चित्रित किया गया, जिनमें सर्पो का आधा भाग जल में एवं मानव रूप जल से ऊपर रहता है, जो रूप इनके जल में निवास को प्रकट करता रहा है। पूर्णावदान नामक जातक कथा के अन्तर्गत बोधिसत्व स्वरूप में अवतरित पूर्ण द्वारा स्वयं के भाई की रक्षा के लिए जब गया तब उस समय नाव समुद्र के तुफानों के बीच फँसी हुई थी, इस बीच देव–शक्तियाँ भी सहायक के लिए वहाँ आगे आयी, जिसमें महेश्वर यक्ष द्वारा नाव को तुफानों से अलग कर सही स्थल पर लाते हैं। इस चित्र में नीचे की ओर दो नाग–शतियों द्वारा भी सहायता की जाती है। उस नाव के आस–पास ऐसी कई मिथकीय अर्द्ध–मानवीय आकृतियों के रूप में चित्रांकित हैं। गुफा संख्या–2 का यह चित्र अकिांशतः खराब हो गया है, लेकिन बचे हुए अवशेष से इस बात का अनुमान लगा सकते हैं कि ये सभी शक्तियाँ असीम प्राकृतिक शक्तियों से सम्पन्न होती थी। यह समुद्रीय–जीव जिनके द्वारा उन दो भाईयों की रक्षा की जाती है एवं नाव को बहाव के दूसरे छोर पर सुरक्षित पहुँचाते हैं। अजन्ता की गुफाओं में जातक कथाओं के चित्रांकन के साथ–साथ अनेक स्थानों पर विभिन्न काल्पनिक पशु–पक्षियों द्वारा बुद्ध के प्रतीकों की पूजा के दृश्यों में नाग का अंकन, जिसमें जन्म के समय के महाभिनिष्क्रमण के समय भी नाग राजाओं द्वारा बुद्ध की पूजा का विवरण बौद्धग्रन्थ ललितविस्तार में मिलता है। बौद्ध साहित्य में मुचलिन्द एवं इलापट्रा नाग बुद्ध के प्रीतक की पूजा करते हुए प्रदर्शित हैं, यहाँ मुचलिन्द नाग की कथा प्रसिद्ध है।[11] अजन्ता में नागराज की एक मूर्ति है, जिसमें नागराज मानवरूप में एवं सिर पर कई फणों वाले सर्प का चित्र अंकित है। इनके बगल में अत्यन्त सुन्दर कन्या उपस्थित है। दोनों मूर्ति सिंहासन पर है, यह एक नागराज एवं नागरानी की संयुक्त मूर्ति है। यहाँ बहुत सी ऐसी प्राप्त मूर्तियाँ हैं, जो नाग से सम्बन्धित हैं। जातक कथाओं में नाग भी यक्षों की तरह ही शक्तिशाली देवता के रूप में आए हैं।

प्राचीन बैद्ध–धर्म–ग्रन्थों के अन्तर्गत आने वाली इन जातक कथाओं में भी इसका अंकन है, जैसे जातक कथाओं में शंखपाल नागराज एवं चाम्पेय नागराज का वर्णन आता हैं, जिसमें शंखपाल नागराज कर्णपेण नदी से निकलकर अपने अनुयायियों को उपदेश दिया करता था। इस कथा का विस्तृत उल्लेख आगे किया गया है।

यहाँ गुफा में बुद्ध के साथ नाग के अंकन के दृश्य में इसमें वे पद्मासनस्थ देव मुद्रा में जिसमें उनका दाहिना हाथ सीने के मध्य धर्मचक्र प्रवर्तन मुद्रा में एवं बायां हाथ पैरों के ऊपर ज्ञान मुद्रा में अंकित है। उनका देव किरीट मुकुट, कुण्डल से अलंकृत, उभय परिकर में गण एवं अन्य मालाधारी विधाधर युगल प्रदर्शित हैं। साथ ही प्रतिमा के ऊर्ध्वभाग में अनेक नाग फण सहित प्रदर्शित है, जिनमें सर्पों का पुच्छ भाग आपस में लिपटा हुआ है।

इन नाग मूर्तियों में उनके दाहिने हाथ अभय मुद्रा जो कि देवत्व पद का सूचक एवं बायें हाथ प्रायः चशक उत्कीर्ण रहता रहा है। बाल्मीकि कृत रामायण एवं दिव्यावदान में उनकी संख्या

उदक निःसृत देव कीथी, शेषनाथ के रूप में विष्णु के वाहन रहे हैं। कथाओं में नागों को मृत्युतम एवं अनृत का प्रतीक माना गया है। बौद्धधर्म में नाग को सभ्रांत देवों में स्थान मिला। इन नागों के चित्रण में पाँच फण एवं नागराज्ञी के तीन फणों से युक्त दिखते हैं। भारत की मध्ययुगीन कला के अन्तर्गत उड़ीसा के मन्दिरों में नागों को मिश्रित रूप जैसे कि शरीर का निचलता अंग नाग का एवं मुख केवल मनुष्य का दिखता है। जैन धर्म में तो इनका अंकन केवल जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ के सिरे पर सत्पफण स्वरूपों में दिखता है। इस तरह कृष्ण, बुद्ध एवं महावीर के जीवन में नाग देवताओं की कथा प्रचलित रही है। ऐसा वर्णन आता है, कि जिस प्रकार इन्द्र ने वृत्र नामक अहि का दमन किया, कृष्ण ने कालिया नाग को वश में, महावीर ने चन्द्र को एवं बुद्ध ने अपलाल को परास्त किया था।[12]

विभिन्न युगों में इनके अंकन का इतिहास अति प्राचीन रहता आया है। इसलिए इन नागों की प्राचीनता का यहाँ प्रतीकात्मक स्वरूप में वर्णन किया जाए तो कालियादमन घटना अचेतना के वास तो, चेतना की गति के अवरूव होने पर दिव्य चेतना के अचेतन को दमिल कर चेतना की गति को अबाद्ध बनाती है। मनोवैज्ञानिक व्याख्या के आधार पर कालियानाग रूपी नाग तामसिक वृत्तियों द्वारा संसार रूपी यमुना के जल को विशाक्तकर, तत्पश्चात् कृष्ण रूपी स्थित प्रज्ञा मन द्वारा उन वृत्तियों रूपी नाग–नागिनों को वश में करना एक आध्यात्मिक भावना की व्याख्या को दर्शाता है। जैन धर्मावलम्बियों के द्वारा नागों को पार्श्वनाथ से सम्बन्धित माना गया एवं बौद्धधर्म में जिसमें नाग–प्रकृति देवी शक्ति का प्रतीक स्वरूप मानकर उसे धर्म–प्रतीक रूप में चित्रित किया गया है। इस तरह यह कह सकते हैं, कि भारत के अनेक प्राचीन एवं आधुनिक, मन्दिरों, देवालयों में इनके शिल्पों को भलि–भांति देख सकते हैं। उत्तर भारत से दक्षिण के मन्दिरों, ऊँचे–ऊँचे गोपुरम् में भी इनके सौन्दर्य से युक्त उत्कीर्णित छवि अनुपम रही है। इनके सचित्र उल्लेख की भिन्न–भिन्न अवधारणा बाह्य देशों में भी रहती आयी है। यहाँ हिन्दू, बौद्ध एवं जैन सभी धर्मों में इनके सम्बन्ध में विभिन्न मतान्तर रहे हैं, परन्तु इनका वर्णन एवं महत्व है सभी में।[13]

संदर्भ ग्रन्थ

1. झॉ, डॉ. शशि. (1992). 'भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला में नारी का स्वरूप'. पृष्ठ **104, 105.**
2. शास्त्री, श्री बाबुलाल शुक्ल. (संवत्–2062). 'नाट्यशास्त्रम्' (श्री भरतमुनिप्रणीतं सचित्रम्). संस्करण–द्वितीय विक्रमी. चौखम्बा संस्कृति संस्थानः वाराणसी. पृष्ठ **13.**
3. मिश्र, डॉ. रमानाथ. (1978). 'भरहुत'. हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः मध्य प्रदेश. पृष्ठ **32,33.**
4. गुप्ता, आर.एस., महाजन, बी.डी. 'अजन्ता और एलोरा'. पृष्ठ **62.**
5. वही.

6. प्रताप, डॉ. रीता. (2012). 'भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास'. संस्करण–13वां. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः जयपुर. पृष्ठ **461.**
7. प्रताप, डॉ. रीता. (2012). 'भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास'. संस्करण–13वां. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः जयपुर. पृष्ठ **461.**
8. बाजपेयी, डॉ. सन्तोश कुमार. (1992). 'गुप्तकालीन मूर्तिकला का सौन्दर्यात्मक अध्ययन'. संस्करण–1. ईस्टर्न बुक लिंकर्सः दिल्ली. पृष्ठ **168.**
9. जोशी, डॉ. नीलकण्ठ पुरूषोत्तम. (1976). 'प्राचीन भारतीय मूर्ति–विज्ञान'. बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्ः पटना. पृष्ठ **276.**
10. श्रीवास्तव, डॉ. आर.एन. (2008). 'भारतीय ला में नाग'. स्वाति पब्लिकेशन्सः दिल्ली. पृष्ठ **11.**
11. मिश्र, डॉ. इन्दुमती. (1972). 'प्रतिमा विज्ञान'. संस्करण–(1). मध्य प्रदेश, हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः भोपाल. पृष्ठ **352.**
12. मिश्र, डॉ. इन्दुमती. (1972). 'प्रतिमा विज्ञान'. संस्करण–(1), (2)1987. मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः भोपाल. पृष्ठ **352.**
13. श्रीवास्तव, डॉ. आर.एन. (2008). 'भारतीय कला में नाग'. स्वाति पब्लिकेशन्सः दिल्ली. पृष्ठ **74.**